Preface

:: भूमिका ::

कविता के प्रति मेरा लगाव बचपन से ही रहा है जो उच्च शिक्षा तक बराबर बना रहा। एम० ए० कक्षा में जाकर छायावादोत्तर हिन्दी साहित्य के इतिहास का अध्ययन करने का अवसर मिला जिसमें कविता के क्षेत्र में स्थापित प्रयोगवाद, नयी कविता तथा समकालीन कविता का अध्ययन रुचिकर लगा। इसकी रुचि के अनेक कारणों के साथ-साथ विशेष कारण इस कविता की नयी अनुभूतियाँ तथा शैल्पिक प्रयोग ही थे। उन दिनों एक बात लगभग सभी पत्र-पत्रिकाओं तथा साहित्यिक गोष्ठियों में पढ़ने तथा सुनने को मिलती थी कि समकालीन कविता, सातवें दशक की कविता अथवा साठोत्तरी कविता। साठोत्तरी कविता अनेक छोटी-बड़ी परिचर्चाओं का विषय बन गई थी। इस कविता-नाम के संदर्भ में मूल्य, नवीन भावबोध, प्रतिबद्धता, आम आदमी, आधुनिकता, नंगी भाषा आदि शब्दों का प्रयोग भी साथ ही साथ चलता रहा। कविता के साथ अनेक विशेषणों का सम्बोधन पढ़-सुनकर मस्तिष्क में यह प्रश्न बार-बार उठता था कि यह साठोत्तरी कविता क्या है जिसका नाम इतना जोर-शोर से सुना जाता है। एम० ए० उत्तीर्ण करने के पश्चात् जिज्ञासा ने और विस्तार लिया। प्रश्नों की इसी ऊहापोह ने साठोत्तरी कविता के विषय में कुछ गहरे पैठकर जानने की प्रेरणा को जन्म दिया। मित्रों से फिर सलाह-मशविरा ने मेरे विचारों को और बल प्रदान किया। तत्पश्चात् मैंने साठोत्तरी हिन्दी कविता के शोधपूर्ण अध्ययन करने की इच्छा को अन्तिम रूप दिया।

विषय चुनने के उपरान्त योग्य निर्देशक की समस्या भी कम चुनौती भरी नहीं थी। इसके लिए कई महापुरुषों के दरवाजों पर दस्तक दी, परन्तु कभी उनकी असली एवं आरोपित विवशता तथा कभी

मेरी असमर्थता इसमें आड़े आई । चिन्तनमनन के इस दौर में श्री केदारनाथ जी पचौरी के माध्यम से आदरणीय डॉ० दयाशंकर जी शुक्ल से परिचय हुआ । जब डॉ० शुक्ल जी से मैंने उनके निर्देशन में साठोत्तरी हिन्दी कविता पर शोध-कार्य करने की इच्छा प्रकट की तो उन्होंने अपनी उदारता के कारण स्वीकृति प्रदान की । डॉ० मदनगोपाल गुप्त (हिन्दी विभागाध्यक्ष) तथा डॉ० दयाशंकर शुक्ल ने साठोत्तरी हिन्दी कविता के अनेक पहलुओं पर विचार-विमर्श के पश्चात् 'साठोत्तरी हिन्दी कविता: वस्तु और शिल्प' विषय को अन्तिम रूप प्रदान किया ।

भारतीय स्वतंत्रता के पच्चीस वर्षों के इतिहास खण्ड को हम दो भागों में बाँट सकते हैं:- १- मोहग्रस्तता का काल, २- मोहभंग का काल । मोहग्रस्तता का काल वह था जिसमें भारतीयों को अनेक आश्वासन दिए गए तथा उनके पूरे न होने का भ्रम प्रत्येक जनमानस में बना रहा । यह समय १९६० तक चलता रहा । स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय संविधान के द्वारा नागरिकों को खुशहाली के अनेक आश्वासन दिए गए जिसमें मौलिक अधिकार और नीति निर्देशक तत्वों के द्वारा मानव के सर्वांगीण विकास की बात दोहराई गई । जहाँ सामाजिक व्यवस्था से अनेक बुराइयों को हटाकर उनमें आमूलचूल परिवर्तन की बात कही गई, वहीं आर्थिक मोर्चे पर आत्मनिर्भर होने का दावा भी प्रस्तुत किया गया । विदेश नीति में 'पंचशील,' 'सहअस्तित्व,' 'अहिंसा' और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' को आधार बनाया गया । एक भाषा और एक झंडा का नारा भी लगाया गया । इन वायदों को पूरा करने के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ प्रारंभ की गई । प्रजातंत्रीय शासन-प्रणाली के लिये आम-चुनाव हुए जिनमें कांग्रेस को जन-समुदाय ने विजयी बनाया । स्वतंत्र भारत का नागरिक आयोग, संविधान में संशोधन, आम चुनाव के समय दोहराये गए वायदे, पंचवर्षीय योजनाओं के प्रारूप, राजनेताओं के आश्वासन भरे भाषण लगभग डेढ़ दशक तक सुनता रहा । जब उसे अपनी आशाएँ फलीभूत होती दिखाई नहीं दीं,

तो उसमें आशा और विश्वास के स्थान पर निराशा और कुंठा पनपने लगी। देश की खुशहाली, आत्मनिर्भरता तथा प्रगति का पर्दाफाश उस समय हुआ जब १९६२ में चीन ने भारत पर आक्रमण किया।

चीनी आक्रमण ने भारत की मोहग्रस्तता की केंचुल उतारकर उसका मोहभंग कर दिया जो लगभग एक दशक तक चलता रहा। सन् ६० के पश्चात् स्वतंत्र भारत की उपलब्धियाँ हमारे सामने शनै: शनै: आती गईं। चीनी आक्रमण में हमारी पराजय ने पंचशील, अहिंसा और भाई-भाई के नारे के समक्ष प्रश्न-चिन्ह लगा दिया। राजनेताओं की दूरदर्शिता पर उँगली उठायी जाने लगीं। नेहरू तथा शास्त्री की मृत्यु ने भी राजनैतिक स्थिति को काफी प्रभावित किया। इसके पश्चात् ६५ और ७१ के पाकिस्तानी युद्धों का सामना भी देश को करना पड़ा। जिससे हमारी अर्थव्यवस्था बुरी तरह चरमरा गई। आम चुनावों की कूटरु रणनीति, सांसदिकों के झूठे आश्वासन और कुर्सी की आपसी धक्का-मुक्की ने मानव को सोचने के लिए विवश कर दिया। सामाजिक ढाँचे में भी बिखराव आने लगा। भ्रष्टाचार, बेईमानी और अनाचार को प्रश्रय मिला। औद्योगीकरण से अनेक सामाजिक और पारिवारिक समस्याएँ जन्मी। युवा पीढ़ी में असंतोष फैला और अनुशासनहीनता फैल गई। आर्थिक प्रगति के नाम पर गरीब और अमीर के बीच फासला बढ़ता गया। मँहगाई और बेरोजगारी ने मनुष्य का जीवन-स्तर आशानुकूल नहीं बढ़ने दिया। कहने का आशय है कि राजनीतिक आर्थिक तथा सामाजिक सभी मोर्चों पर हम हताश हुए। यह बात नहीं है कि स्वतंत्र भारत में कोई उन्नति हुई नहीं। परन्तु दिए गए आश्वासनों का शतांश ही हमें मिल सका। न्याय का गला घुटते और अन्याय को पुरस्कृत होते मनुष्य ने स्वयं देखा तो उसमें एक प्रकार का अस्वीकार और आक्रोश का स्वर पनपा।

देश में जब इस प्रकार का वातावरण हो जहाँ हर एक चीज़

बेहद गड़बड़ और अव्यवस्थित हो तो इस उथल-पुथल का प्रभाव प्रत्येक मनुष्य पर पड़ता है। इस वातावरण ने भारतीयों की मानसिकता को भी प्रभावित किया जिससे उनके भाव-विचार में परिवर्तन आने के साथ-साथ उनके सोचने - विचारने की प्रक्रिया भी बदली न रह सकी। इस प्रकार के परिवेश से किसी खास किस्म की कविता की संभावना बलवती हो जाती है। सन् ६० के पश्चात् उसके परिवेश और परिस्थितियों के दबाव के फलस्वरूप जो कविता सामने आई वह निश्चय ही ६० से पूर्व की कविता से भिन्न थी, क्यों कि दोनों काल खण्डों की परिस्थितियाँ तथा परिवेश भिन्न थे। यह अन्तर हमें अनुभूति के स्तर पर ही नहीं अभिव्यक्ति के स्तर पर भी स्पष्ट परिलक्षित होता है। सातवें दशक की अनुभूतियां इतनी तीव्र, आक्रोशपूर्ण और विरोधात्मक थीं कि उन्हें परम्परित काव्य-भाषा, छन्द, प्रतीक आदि के द्वारा अभिव्यक्त करना नामुमकिन था। अत: इस अनुभूति ने काव्य-शिल्प के मुहावरे को भी बदल दिया।

प्रबंध-संक्षिप्ति::-

इस प्रकार 'वस्तु और शिल्प' के आधार पर हम साठोत्तरी कविता के समस्त कलेवर को आत्मसात कर सकते हैं। प्रस्तुत शोध-प्रबंध को साठोत्तरी कविता के 'वस्तु' और 'शिल्प' सम्बन्धी अध्ययन के लिए निम्न प्रकार से रूपायित किया गया है :--

शोध-प्रबंध की विषय-वस्तु को सात अध्यायों में विभक्त किया है। सर्वप्रथम साठोत्तरी कविता के मूल्यांकन की समस्या को 'विषय प्रवेश' में उठाया गया है। साठोत्तरी कविता के पक्षधर और विरोधी मतों को प्रस्तुत करते हुए इसके सही और निष्पक्ष प्रतिपादन की बात को दुहराया गया है। साथ ही साठोत्तरी कविता के महत्व की ओर संकेत किया गया है।

प्रथम अध्याय में पहले 'वस्तु और शिल्प' का महत्व बताते हुए उसके विविध पर्याय शब्दों का विवेचन किया गया है। तत्पश्चात् भारतीय और पाश्चात्य काव्य-शास्त्र में 'वस्तु' और 'शिल्प' सम्बन्धी मतों का उल्लेख किया है। कविता में 'वस्तु' और 'शिल्प' की प्रासंगिकता का निरूपण भी इसी के अन्तर्गत किया गया है।

द्वितीय अध्याय में साठोत्तरी कविता की पृष्ठभूमि को बताने के साथ-साथ उसके समकालीन परिवेश की भी विवेचना है जिसमें राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों का उल्लेख किया गया है। आधुनिकता-बोध की चर्चा करते हुए मार्क्सवादी तथा अस्तित्ववादी आदि जीवन दृष्टियों के प्रभाव को अंकित किया है। साठोत्तरी कविता के अभ्युदय तथा प्रगति को बताते हुए उसके विविध प्रमुख काव्यान्दोलनों के दृष्टिकोणों को स्पष्ट किया गया है। इसी संदर्भ में बताया गया है कि साठोत्तरी कवियों का कविता के बारे में क्या दृष्टिकोण है। 'वस्तु' और 'शिल्प' सम्बन्धी साठोत्तरी मान्यताओं का विवेचन भी किया गया है। साठोत्तरी कविता की परिवेशगत संभावनाओं तथा कवियों द्वारा प्रकल्पित काव्य-रूप के आधार पर कविता के बारे में कुछ प्रतिमानों की स्थापना की गई है।

तृतीय अध्याय कविता के वस्तु-तत्व से सम्बन्धित है। इस युग में सबसे बड़ा आघात मूल्यों पर हुआ है अतः पहले 'वस्तु' के अन्तर्गत व्यक्तिगत और सामाजिक मूल्यों को उठाया गया है। मूल्यों में हुए विघटन, संक्रमण तथा परिवर्तन के संदर्भ में इनकी विवेचना की गई है। तदुपरान्त कविता के राजनीतिक संदर्भ तथा युवा कवियों द्वारा राजनीतिक प्रतिबद्धता के परिप्रेक्ष्य में 'वस्तु' को देखा गया है। युगबोध और

यथार्थबोध के अन्तर्गत बताया गया है कि आज का कवि किस प्रकार समकालीन वास्तव की ईमानदार अभिव्यक्ति करने को कटिबद्ध है। शोषण, वर्गभेद, आक्रोश तथा विद्रोह का उल्लेख भी यहाँ किया गया है। आज हम बौद्धिकता के युग में जी रहे हैं,अतः साठोत्तरी कविता को भी विचार तत्व के आधार पर परखा गया है। साठोत्तरी कविता युवा कविता है इसलिए युवा वर्ग की समस्याओं को भी इस माध्यम से देखा गया है। अस्वीकार और विरोध के इस काल में सौन्दर्य चेतना के भी नये आयाम पल्लवित हुए हैं अतः साठोत्तरी कविता को सौन्दर्य शास्त्रीय दृष्टि से भी परखा गया है। अन्त में साठोत्तरी कविता की वस्तु-चेतना के विषय में कुछ निजी निष्कर्षों को रूपायित किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में भाषागत अध्ययन है। साठोत्तरी कविता में नयी अनुभूतियाँ, यथार्थपरक संरचना आदि के नाम पर उसका जो मुहावरा बदला है, उसमें आक्रोश, विद्रोह, गद्यात्मकता, सपाट बयानी, भाषायी सामान्यीकरण आदि के जो स्वर उभरकर आये हैं - उनका आकलन है। साठोत्तरी भाषा के बदलते हुए शब्द-क्रोड का विवेचन करते हुए उसकी बढ़ती हुई शक्ति और अर्थगांभीर्य की ओर संकेत किया गया है। आम आदमी के साथ-साथ जनभाषा का सवाल स्वतः उठ जाता है। अतः जन-भाषा की दृष्टि से भी साठोत्तरी कविता का मूल्यांकन किया गया है। लोकोक्ति, मुहावरे सूक्तिमयता, कथन-भंगिमा तथा व्यंग्य का विश्लेषण भी किया गया है। अन्त में साठोत्तरी भाषा की अदामताओं पर प्रकाश डालते हुए उसकी उपलब्धियों का निरूपण किया गया है।

पंचम अध्याय में साठोत्तरी कविताके 'शिल्प' को परखा गया है। सर्वप्रथम प्रतीकों का अध्ययन किया गया है। जिसमें पहले प्रतीक वे हैं जो परम्परावादी होते हुए भी नये अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं तथा दूसरे प्रकार के प्रतीक नये निजी और विशिष्ट हैं। बिम्बों का विभाजन भी मानवीय और मानवेतर दो शीर्षकों के अन्तर्गत किया गया है। उपमानों

को भी तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है। पहले प्रकार के उपमान वे हैं जो जनसाधारण के जीवन से उठाये गए हैं अन्य दो में प्राकृतिक उपमान तथा मानवीकरण की चर्चा की गयी है। छन्द-विधान पर भी मुक्त छन्द और परिवर्तित परम्परित छन्द के संदर्भ में संक्षिप्त विचार किया गया है। अन्त में यह बताया गया है कि प्रतीक, बिम्ब, उपमान तथा छन्द, भाव-विचार तथा जीवन स्थितियों को अभिव्यक्त करने में कहां तक सहायक रहे हैं।

छठे अध्याय में साठोत्तरी दशक में लिखी गई लम्बी कविताओं की चर्चा है जिसमें उसके शिल्प पक्ष पर विशेष प्रकाश डाला गया है। इसी अध्याय में छोटी कविता तथा फैंटेसी का उल्लेख भी किया गया है। लम्बी कविताओं की आवश्यकता, महत्व तथा उसकी मानसिक बुनावट का अध्ययन भी इसी संदर्भ में किया गया है।

सप्तम् अध्याय में उपसंहार है जिसमें विवेचन के आधार पर साठोत्तरी कविता के 'वस्तु' और 'शिल्प' सम्बन्धी निष्कर्षों का प्रतिपादन करते हुए उसकी सीमाओं और उपलब्धियों का विवेचन है।

अन्त में परिशिष्ट है जिसमें आलोच्य ग्रन्थों के साथ-साथ हिन्दी अंग्रेजी तथा संस्कृत के संदर्भ ग्रन्थ तथा पत्र-पत्रिकाओं की नामानुक्रमणिका है। प्रस्तुत प्रबंध की शोध-प्रक्रिया में हमने तथ्यों को सामने रखकर उनका तटस्थता तथा गंभीरता से मंथन कर किसी ठोस परिणाम तक पहुँचने की चेष्टा की है।

शोध-प्रबन्ध के अन्तर्गत कुछ प्रमुख कवि तथा चर्चित कविता-संग्रहों को स्थान दे पाना ही संभव हो सका है क्यों कि इसके बिना अनावश्यकरूप से शोध का आकार तो बढ़ ही जाता उसमें गंभीरता और नवीनता का प्रतिपादन भी कर पाना संभव न होता। कुछ कवियों के